गाँधीजी की प्राकृतिक चिकित्सा के प्रति आस्था

वैद्य गोपीनाथ पारीक 'गोपेश'
अध्यक्ष – राजस्थान आयुर्वेद विज्ञान परिषद्
साहित्य सरोवर संस्था

आयुर्वेद एक प्राचीन चिकित्सा-पद्धति ही नहीं अपितु जीवनविज्ञान भी है। इसका क्षेत्र बहुत विस्तृत है। चिकित्सा की दृष्टि से जो अठारह प्रकार के उपशय वर्णित हैं, उनमें प्रचलित सभी चिकित्सा-पद्धतियाँ समाविष्ट हो जाती हैं। ये चिकित्सा-पद्धतियाँ किसी एक विषय को ग्रहण कर अपनी प्रक्रिया सम्पादित करती हैं, जबकि आयुर्वेद आवश्यकतानुसार सभी को उपयोग में ला कर शरीर को दोषरहित बनाने में सफल सिद्ध होता है। आज की प्रचलित प्राकृतिक चिकित्सा आयुर्वेद से पृथक् नहीं है। इसके सिद्धान्त और आयुर्वेद के सिद्धान्तों में प्रायः साम्यता है। आयुर्वेद में जिसे स्वभावोपरम या हेतुव्याधि विपरीत अन्न एवं विहार कहा गया है, यह प्राकृतिक चिकित्सा ही है। आचार्य वाग्भट कहते हैं-

हिताहारविहारणां सदाचारनिषेविणाम् ।
लोकद्वव्यपेक्षाणां जीवितं ह्यमृतायते ।।

प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली का कार्य है, एक ओर विजातीय द्रव्यों को शरीर से बाहर निकालना और उसे अपनी पूर्वावस्था पर पहुँचाना तथा दूसरी ओर उपयुक्त प्राकृतिक भोजन द्वारा शरीर में उन पोषक तत्त्वों को पहुँचाना, जिनकी उसे वास्तव में आवश्यकता हो। इस चिकित्सा प्रणाली के प्रकार सर्वथा सादे, सरल और स्वाभाविक होते हैं। मादकता एवं माँसाहार का इसमें सर्वथा निषेध है। इस प्रणाली का मानना है, कि मनुष्य दवाओं से कभी निरोग नहीं हो सकता, अपितु प्रकृति की सहायता से ही अपनी जीवनी शक्ति को बढ़ा कर रोगमुक्त हो सकता है। रोग शरीर के विषों का, जिन्हें कि विजातीय द्रव्य कहा जाता है, निष्कासन मात्र है।

इस कार्य में हम प्रकृति की जितनी अधिक सहायता करेंगे, उतना ही हमारा शरीर अधिक स्वस्थ होगा। वही द्रव्य या उपाय आरोग्यप्रद हो सकता है, जिसका हमारी जीवनी शक्ति से सीधा सम्बन्ध है। ये द्रव्य एवं उपाय हैं - मिट्टी, पानी, हवा, प्रकाश, विश्राम, व्यायाम, उपयुक्त आहार, उपवास तथा उच्च उदात्त मानसिक भावनाएँ आदि। इनके अतिरिक्त दवाओं को यहाँ विशेष महत्त्व नहीं दिया जाता। एक प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक (जॉन मेसन

गुड) का कथन है - 'लड़ाई, महामारी और दुष्काल इन तीनों की अपेक्षा दवाओं से मरने वालों की संख्या अधिक है'।

महात्मा गाँधी इसी प्राकृतिक चिकित्सा के पक्षपाती थे। वे रामनाम को सबसे बड़ा अवलम्बन मानते थे जो आयुर्वेदोक्त देवव्यापाश्रय औषध है। वे पथ्यसेवन, अपथ्यत्याग और उच्च मनोभावों को अधिक महत्व देते थे। यह आयुर्वेदोक्त सत्वावजय है। पानी, मिट्टी, उपवास आदि से उपचार को वे अधिक महत्त्व देते थे - यह आयुर्वेक्तयुक्तिव्यपाश्रय औषध है। वे माँसाहार के प्रबल विरोधी थे, क्योंकि इसमें हिंसा का प्रयोग होता है। वे तो अहिंसा के पुजारी थे। आयुर्वेद भी अहिंसा को श्रेष्ठ प्राणवर्धक कहता है - अहिंसा प्राणवर्धनानां श्रेष्ठतमा (चरक)। आयुर्वेद में तो फिर भी क्वचित् चिकित्साप्रकरणों में रोगी के प्राण बचाने हेतु माँस के प्रयोगों का उल्लेख मिलता है, किन्तु उन्होंने माँसाहार को चिकित्सा में कहीं महत्त्व नहीं दिया। उनके जीवन के दो प्रसंग यहाँ दिये जा रहे हैं, जिनमें उन्होंने माँसाहार को नकारते हुए केवल प्राकृतिक चिकित्सा के आधार पर ही अपने पुत्र तथा पत्नी के प्राण बचाये थे -

1. गाँधीजी के पुत्र मणिलाल सन्निपात ज्वर से ग्रस्त हो गये। ज्वर कम हो ही नहीं रहा था। उन्होंने उपचार हेतु एक चिकित्सक को घर बुलवाया। चिकित्सक ने भली भाँति उसके शरीर का परीक्षण कर कहा - 'गाँधी जी ! आपके बच्चे के इलाज में अब औषधियाँ काम नहीं कर सकती, अब तो इसे अण्डे और मुर्गी का शोरबा देना ही अच्छा है।

गाँधी जी चिकित्सक की बात सुन कर चौंके, उन्होंने बड़ी आश्चर्य की मुद्रा में कहा - 'डाक्टर साहब ! मेरा परिवार तो शाकाहारी है। मैं इन दोनों वस्तुओं को नहीं दे सकता। यदि सम्भव हो तो कोई दूसरी ही वस्तु बताइये'।

डॉक्टर ने उत्तर दिया - 'आप नहीं जानते, कि रोगी की स्थिति कितनी खराब है। बचना मुश्किल है। रोगी मृत्यु से जूझ रहा है। हाँ, दूध और पानी मिला कर दिया जा सकता है पर इससे पोषण पूरा नहीं होगा'।

गाँधीजी ने कहा - 'डॉक्टर साहब ! इन वस्तुओं का उपयोग मेरी दृष्टि में हिंसा होगा। उचित हो या अनुचित, पर मैं तो इसे धार्मिक दृष्टि से देखता हूँ। मैं आपका यह इलाज तो करा नहीं सकता। मुझे नाड़ी और हृदय गति देखना नहीं आता, अतः आप समय समय पर आ कर इसकी जाँच कर मुझे अवगत कराते रहें - आपकी बड़ी कृपा होगी'।

डॉक्टर जाँच करने का आश्वासन दे कर चले गये। अब गाँधी जी ने मणिलाल की जलचिकित्सा प्रारम्भ की। उन्होंने एक चादर पानी में भिगोई और उसे निचोड़ कर सिर से ले कर पैर तक लपेट दिया। सिर पर भी भीगा तोलिया रख कर ऊपर से दो कम्बल ओढा दिये। थोड़ी ही देर बाद उन्होंने देखा कि मणिलाल का शरीर पसीने से तर हो गया है, ज्वर भी कम हो गया। आशा के विपरीत एकदम इतना परिवर्तन देख कर गाँधीजी बड़े प्रसन्न हुए। कस्तूरबा भी जो

घबरा रही थी, अब प्रसन्न हुई। दोनों ने ईश्वर को धन्यवाद दिया।

डॉक्टर ने अन्ततः यह स्वीकारा कि चिकित्सा के नाम पर की जाने वाली हिंसा न तो आवश्यक है और न अमोघ है। बिना हिंसा का सहारा लिए भी रोग ठीक किये जा सकते हैं और अपेक्षाकृत कम समय तथा कम खर्च में।

2. यह उस समय की बात है, जब गाँधी जी और कस्तूरबा दक्षिण अफ्रीका में कई वर्ष रह चुके थे और वहाँ भारतीयों के अधिकारों की रक्षा के लिये सत्याग्रह प्रारम्भ हो चुका था। बा को खूनी बवासीर के कारण बहुत अधिक रक्तस्राव होता था। इससे वे बहुत कमजोर हो गयी थी। गाँधीजी के डॉक्टर मिना ने ऑपरेशन कर उसे ठीक कर दिया। कुछ दिनों बाद भी कमजोरी विशेष बनी रही और वह उठ-बैठ भी नहीं सकती थी। एक बार तो वह बेहोश भी हो गयी। ऐसी स्थिति में डॉक्टर ने गाँधीजी से कहा - 'अब मेरी सम्मति में बिना माँस का शोरबा दिए कमजोरी दूर नहीं होगी'।

गाँधीजी ने डॉक्टर को बतलाया कि-'यह कभी माँस का व्यवहार नहीं कर सकती ओर मैं भी इसे धोखे से ऐसी चीज खाने को नहीं दे सकता। माँस न खाने से इसकी मृत्यु होती हो, तो भी मैं उसके लिए तैयार हूँ।'

गाँधीजी की बात सुन कर डॉक्टर ने कहा - कि जब तक आपकी पत्नी मेरी देख-रेख में रहेगी, तब तक मैं इसे माँस अथवा जो कुछ भी देना उचित होगा, दूँगा। यदि यह स्वीकार न हो, तो आप अपनी पत्नी को यहाँ से ले जाइये। रास्ते में ही यह मर जाए तो मुझे आश्चर्य नहीं होगा।

गाँधीजी ने डॉक्टर से बहस करना बेकार समझा और बेटे को कह कर स्टेशन जाने के लिये रिक्शा भी मँगवा लिया। इससे पहले ही उन्होंने एक आदमी को अपने आश्रम 'फीनिक्स' में भेज कर अपने सहयोगी मि. वेस्ट से कहलवा दिया था, कि वे एक डोली, एक दूध की बोतल और कुछ आदमियों को ले कर स्टेशन पर आ जाएँ। बा को हिम्मत नहीं बँधानी पड़ी। उलटे उसी ने हिम्मत बँधाते हुए कहा-'मुझे कुछ नहीं होगा, आप चिन्ता न करें'। रिक्शा स्टेशन के भीतर तो जा नहीं सकता था और गाड़ी तक पहुँचने के लिए प्लेटफार्म पर बहुत दूर चलना पड़ता था। बा चलने में असमर्थ थी। गाँधीजी उसे अपनी गोद में उठा कर गाड़ी तक ले गये और सकुशल फीनिक्स जा पहुँचे। वहाँ केवल पानी से उपचार कर बा को निरोग और पुष्ट बना दिया।

इस प्रकार गाँधी जी ने अपनी दृढ़ आस्था और विश्वास के बल पर ही प्राकृतिक उपचार से अपने पुत्र तथा पत्नी के प्राणों की रक्षा की। उपचार में भी उन्होंने हिंसाजनित प्रयोगों का दृढ़ता से बहिष्कार किया।